1996 के अधिनियम की धारा 8 की उप-धारा (2) के प्रावधान के गैर-अनुपालन की इस तकनीकी याचिका को उठाने की अनुमति दी जाएगी।

(4) आदेश के इस स्तर पर, अपीलार्थियों के लिए विद्वान वकील उनके द्वारा उठाए गए अन्य तर्कों के लिए दबाव नहीं डालते हैं।उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह अपील आधारहीन है और खारिज किए जाने योग्य है।

(5) नतीजतन, इस अपील को खारिज कर दिया जाता है।

जे एस टी।

न्यायामूर्ति वी. के. बाली और एम. एल. सिंघल के समक्ष

विवेक सरीन,-अपीलार्थी
बनाम
बहु धातु उद्योग,-उत्तरदाता

1998 का सी.ए.सी.पी. 3
3 नवंबर, 1998

अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971-धारा 12-समकालीन ने कंपनी अधिनियम की धारा 433 और 434 के तहत कार्यवाही को समाप्त करते हुए किश्तों में ऋण का भुगतान करने पर सहमति व्यक्त की थी-इसके अलावा इस बात पर भी सहमति व्यक्त की कि भुगतान में एक भी चूक के मामले में उसके खिलाफ अवमानना कार्यवाही शुरू की जा सकती है-चूक हुई-अवमानना कार्यवाही शुरू की गई और अपीलार्थी को अवमानना का दोषी ठहराया गया और राशि जमा करने का भी निर्देश दिया गया-अपीलार्थी को अधिकार क्षेत्र के बिना धन जमा करने का निर्देश देने वाले आदेश को चुनौती-चुनौती के तहत आदेश पर रोक लगा दी गई -भुगतान करने के लिए आदेश को बरकरार रखते हुए स्थगन आदेश में संशोधित किया गया।

यह माना जाता है कि अब तक कानून का सिद्धांत यह है कि पक्षों के बीच पूर्ण न्याय सुनिश्चित करने की दृष्टि से, जिसमें आदेश का उल्लंघन करते हुए कोई कार्य किया जाता है, यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह गलत को सही करे और उसे कायम रहने की अनुमति न दें । वर्तमान मामले में, अदालत को किश्तों में दस लाख रुपये की राशि का भुगतान करने का वचन देते हुए अपीलार्थी ने आगे कहा था कि यदि चूक की गई थी, तो उसे अवमानना के लिए दोषी ठहराया जा सकता है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी को चूक की गई राशि का भुगतान करने का आदेश दिया।इस मामले में ऐसा निर्देश दिए जाने की आवश्यकता थी।श्री साहनी द्वारा किसी भी वैध तरीके से यह तर्क नहीं दिया जा सकता था कि अपीलार्थी द्वारा चूक की गई राशि के भुगतान को रोकने में कोई औचित्य था।हम यहाँ उल्लेख कर सकते हैं कि यदि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए निर्देशों पर रोक लगा दी जाती है। यह वस्तुतः सम के बराबर होगा।

विद्वान कंपनी न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश का गैर-निष्पादन। निश्चित रूप से, केवल वर्तमान अपील दायर करके अपीलकर्ता उस राशि का भुगतान करने के अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता, जिसे उसने न्यायालय को भुगतान करने का वचन दिया था। इतनी राशि के भुगतान पर रोक लगाना प्रतिवादी के साथ अन्याय होगा।

(पैरा 11 और 12)

ओ. पी. गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता एस. के. जसवाल, अधिवक्ता के साथ-अपीलार्थी की ओर से।

यू. एस. साहनी, अधिवक्ता,-प्रत्यर्थी के लिए।

न्याय

माननीय वी. के. बाली

(1) वर्तमान विविध के माध्यम से उत्तरदाता बहु धातु उद्योग ।अदालत की अवमानना नियम, 1973 के प्रावधानों के साथ पठित सी. पी. सी. की धारा 151 के तहत उसके द्वारा दायर आवेदन में 8 जून, 1998 के स्थगन आदेश को हटाने की मांग की गई है ।अपीलार्थी विवेक सरीन द्वारा दायर अपील को स्वीकार करते हुए, पीठ ने अगले आदेश तक अपील के तहत विवादित फैसले के अमल पर रोक लगा दी।1998 का सी. ए. सी. पी. संख्या 3 विवेक सरीन द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ दायर किया गया था, जिसके अनुसार उन्हें अवमानना करने का दोषी ठहराया गया है और 500 रुपये का जुर्माना दो महीने की अवधि के भीतर देने का आदेश दिया गया है। अगर इसमें चूक हुई तो एक महीने के लिए साधारण कारावास से गुजरना होगा ।उन्हें आदेश की तारीख से दो महीने के भीतर पूरी शेष राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।

(2) सिविल विविध के समर्थन या विरोध में पार्टियों के वकील द्वारा उठाए गए तर्कों से पहले, यह पता लगाना उपयोगी होगा कि संक्षिप्तता में, 1998 के सीएसीपी नंबर 3 को जन्म देने वाले तथ्य कौनसे हैं ।प्रतिवादी मल्टी मेटल उद्योग ने कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 434 के साथ पठित धारा 433 के तहत समापन के लिए एक याचिका दायर की थी। प्रतिवादी मल्टी मेटल उद्योग ने मेसर्स एपेक्स मल्टीटेक लिमिटेड को बंद करने के लिए कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 434 के साथ पठित धारा 433 के तहत एक याचिका दायर की थी, जिसके बारे में कहा गया था कि वह प्रतिवादी के प्रति 12 लाख रुपये की ऋणी है। पीड़ित मेसर्स एपेक्स मल्टीटेक ने अपील की। अपील की सुनवाई के दौरान अपीलकर्ता ने एक वचन दिया कि पूरी राशि रु- दस लाख रुपये की दस मासिक किस्तों में भुगतान किया जाएगा। हर महीने 1 लाख रुपये का भुगतान किया जाएगा और पहली किस्त का भुगतान 1 जुलाई, 1997 से पहले किया जाना था और उसके बाद प्रत्येक किश्त का भुगतान हर महीने की पहली तारीख को किया जाना था। यह शपथ पत्र भी दिया गया कि यदि मेसर्स एपेक्स मल्टीटेक लिमिटेड किसी भी खाते में एक भी किस्त का भुगतान करने में विफल रहता है, तो अवमानना के तहत कार्यवाही की जाएगी। अपीलकर्ता के वचन को दर्शाने वाला न्यायालय का आदेश, जो न्यायालय द्वारा पारित किया गया,इस प्रकार है :-

“पक्षों के वकील इस बात पर सहमत हैं कि इस अपील का निपटारा निम्नलिखित नियमों और शर्तों पर किया जाए:

अपीलकर्ता कुल मिलाकर रुपये का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा। प्रतिवादी को 10 लाख रु. इस राशि में ब्याज, अतिरिक्त छूट आदि शामिल होगी। हालाँकि, अपीलकर्ता आज से एक सप्ताह के भीतर सभी प्रपत्र देगा।

अपीलकर्ता रुपये की पूरी राशि का भुगतान करने का वचन देता है। 10 लाख रुपये की 10 मासिक किस्तों मे। हर महीने एक लाख का भुगतान करना होगा और पहली किस्त 1-जुलाई, 1997 को या उससे पहले और उसके बाद हर महीने की 1 तारीख को प्रत्येक किस्त का भुगतान करने का वचन देता है। यदि अपीलकर्ता किसी भी खाते पर एक भी किस्त का भुगतान करने में विफल रहता है, तो अवमानना कार्यवाही शुरू करने के अलावा एक आवेदन पर कार्यवाही फिर से शुरू हो जाएगी।

उपरोक्त समझौते को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अपील का निपटारा कर दिया गया है और कंपनी के न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश रद्द कर दिया जाएगा।”

(3) पक्षों के विद्वान वकील द्वारा यह कहा गया है कि रु। पाँच लाख का भुगतान किया गया और उसके बाद भुगतान करने में चूक हो गई। इसने प्रतिवादी को ऊपर बताए गए परिणामके साथ इस न्यायालय में अवमानना याचिका दायर करने के लिए बाध्य किया।

(4) प्रतिवादी का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता गोयल का तर्क है किइस स्तर पर वह ठहरने की छुट्टी की मांग नहीं कर रहे हैं जहां तक यह जुर्माना और उसके भुगतान न करने के परिणाम के भुगतान से संबंधित है और न ही प्रवेश के आदेश को वापस लेने की मांग कर रहे हैं। इस स्तर पर प्रतिवादी केवल यही दावा कर रहे हैं कि शेष राशि के भुगतान के संबंध में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा जारी किए गए निर्देशों पर रोक नहीं लगाई जानी चाहिए और आक्षेपित निर्णय यानी अपील के तहत फैसले के संचालन पर रोक लगाने से निश्चित

रूप से भुगतान पर रोक लग गई है। स्वीकृत शेष राशि जिसका भुगतान अपीलकर्ता द्वारा किया जाना था। न्यायालय ने अपीलार्थी के वकील को इस आवेदन का नोटिस जारी किया और विविध पक्षों को जवाब दिया। आवेदन दिया जा चुका है ।तथापि,विविध आवेदन में किए गए अभिवचनों का आवेदन और उसका उत्तर के संदर्भ की आवश्यकता नहीं है ।आवेदन और उसका उत्तर, जैसा कि अब तक है ।तथ्यों की बात करें तो दोनों पक्षों के बीच शायद ही कोई विवाद हो।

(5) हालाँकि, अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील श्री साहनी का तर्क है कि चूक की गई राशि के भुगतान का निर्देश देने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश क्षेत्राधिकार के बिना है क्योंकि विद्वान एकल न्यायाधीश अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए केवल अपीलार्थी को अवमानना के लिए दोषी ठहरा सकते हैं, लेकिन उक्त दंडात्मक उपायों के माध्यम से शेष राशि के भुगतान का आदेश नहीं दिया जा सकता है ।उनका दूसरा तर्क यह है कि एक बार अपील स्वीकार कर ली गई है और मोशन बेंच द्वारा स्टे दे दिया गया है, तो मुकदमा चलने तक स्टे जारी रहना चाहिए और बीच में इसे हटाया नहीं जा सकता। उन्होंने अवमानना याचिका पर विचार करने और अपीलकर्ता को अवमानना का दोषी ठहराने के लिए अदालत की अवमानना अधिनियम के प्रावधानों की प्रयोज्यता के संबंध में कुछ दलीलें पेश की हैं, लेकिन इस स्तर पर हम किसी भी अभिव्यक्ति के रूप में विद्वान वकील के उक्त तर्क से चिंतित नहीं हैं। जब मामले की अंतिम सुनवाई होगी तो उक्त बिंदु पर राय निश्चित रूप से किसी भी पक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगी। इस स्तर पर, एकमात्र प्रश्न जिसे निर्धारित करने की आवश्यकता है वह यह है कि क्या विद्वान एकल न्यायाधीश को चूक की गई राशि के भुगतान का आदेश देने का अधिकार क्षेत्र था और यदि इस बारे में कि क्या डिवीजन बेंच के आदेश ने निर्णय के मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में संशोधन की आवश्यकता है ।पक्षों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील को सुनने और मामले के अभिलेखों को देखने के बाद, हमारा दृढ़ विचार है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय के क्रियान्वयन पर रोक लगाने के आदेश में संशोधन की आवश्यकता है और कानून या समानता के तहत अपीलार्थी इसे रोकने के लायक नहीं है। श्री साहनी ने अपने इस प्रस्ताव के लिए कहा कि विद्वान एकल न्यायाधीश भुगतान के संबंध में आदेश पा**रित नहीं कर सका, मद्रास उच्च न्यायालय अब्दुल रज़ाक बनाम अज़ीज़ुन्निसा बेगम** [1]मामले के फैसले पर निर्भर करता है ।अब्दुल रज़ाक के मामले (उपरोक्त) के तथ्यों से पता चलता है कि प्रत्यार्थी को रुपये की दर से चार साल के लिए बकाया किराया जमा करने के निर्देश के लिए एक पुनरीक्षण दायर किया गया था। अब्दुल रजाक के मामले (सुप्रा) के तथ्यों से पता चलता है कि प्रतिवादी को 226.37 प्रति वर्ष रुपये की दर से चार साल के लिए बकाया किराया जमा करने और भविष्य का किराया प्रति वर्ष 250 रुपये की दर के निर्देश के लिए एक पुनरीक्षण दायर की गई थी और ऐसा ही निर्देश नागरिक पुनरीक्षण लंबित होने तक कर दिया। एक सिविल विविध उपरोक्त पुनरीक्षण में दायर याचिका पर न्यायालय ने 28 जनवरी, 1986 को दोनों पक्षों के वकीलों को सुनने के बाद निम्नलिखित आदेश पारित किया:-

" प्रतिवादी बकाया किराया रुपये जमा करेगा। 226.37 इस तिथि से दो महीने के भीतर किराया न्यायालय में अद्यतन करें और भविष्य का किराया उसी दर पर जमा करना जारी रखें जब भी देने की तारीख आए"।

(6) प्रत्यार्थी उपरोक्त आदेश के अनुसार बकाया किराया जमा करने में विफल रहा और समय बढ़ाने के लिए आवेदन किया। उनकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी गई। इसके बाद किरायेदार की प्रतिबद्धता के लिए याचिका दायर की गई।

न्यायालय की अवमानना के लिए क्योंकि उसने 28 जनवरी, 1966 को न्यायालय के आदेश की अवज्ञा की थी। अवमानना याचिका में जारी नोटिस के जवाब में, अवमाननाकर्ता ने एक हलफनामा दायर किया जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह अनुरोध किया गया कि वह राशि का भुगतान करने में असमर्थ था। क्योंकि उसके पास जमीन पर उसका कब्जा नहीं था और वह बहुत बूढ़ा था और उसे लकवा मार गया था और वह बिस्तर पर पड़ा हुआ था। जब समर्पण के लिए आवेदन सुनवाई के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश के पास आया, जिन्होंने जमा के लिए मूल आदेश पारित किया था, तो निम्नलिखित शर्तों में राशि जमा करने के लिए समय दिया गया
था:

---

1 AIR 1970 Madras 14

"प्रतिवादीगण को इस न्यायालय के निर्देश के अनुसार भुगतान करने में सक्षम बनाने के लिए दो
सप्ताह का स्थगन।"

(7) 13 नवंबर, 1967 को जब मामला फिर से उठाया गया, तो अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील ने कोई निर्देश नहीं दिया।न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया:—

"ऊपर बताए गए तथ्यों पर, यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी ने निर्देश के अनुसार राशि जमा नहीं की है।उन्होंने अपने दायित्व को भी स्वीकार किया और राशि जमा करने के लिए समय बढ़ाने का अनुरोध किया।अब तक, ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि प्रतिवादी ने इस न्यायालय के निर्देशानुसार कोई राशि जमा की है।अतः प्रतिवादी न्यायालय की अवमानना का दोषी है।"

(8) भले ही अवमानकर्ता उपरोक्त तिथि पर उपस्थित नहीं हुआ है, लेकिन उसके बेटे ने अदालत में प्रतिनिधित्व किया कि कुछ राशि जमा की गई है और वह अदालत के आदेश के अनुसार जमा करने की व्यवस्था करेगा।अवमानक के पुत्र द्वारा किए गए अभ्यावेदन पर, न्यायालय ने कहा कि यदि राशि निर्देश के अनुसार जमा की जाती है, तो प्रत्यार्थी को यह ध्यान में रखते हुए कोई दंड देना आवश्यक नहीं होगा कि वह 82 वर्ष का था।तब याचिका 27 नवंबर, 1967 को तय की गई थी।जब मामला 28 नवंबर, 1967 को सुनवाई के लिए आया, तो न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश पारित किया:

"सजा की घोषणा को स्थगित कर दिया गया ताकि प्रतिवादी या उसके बेटे को निर्देशित राशि जमा करने में सक्षम बनाया जा सके।पैसा जमा नहीं किया गया है।प्रतिवादी स्पष्ट रूप से अवमानना का दोषी है।प्रतिवादी की अत्यधिक वृद्धावस्था को ध्यान में रखते हुए, मैं प्रतिवादी को दो सप्ताह के साधारण कारावास की सजा देता हूं।"

(9) यह विद्वान एकल पीठ का आदेश है जो अब्दुल रज़ाक के मामले (उपरोक्त) में मद्रास उच्च न्यायालय की खंड पीठ के समक्ष अपील में सुनवाई के लिए आया था।ऊपर दिए गए तथ्यों से यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के आदेश का पालन न करना जिसके तहत उसे किराए के बकाया को जमा करने का निर्देश दिया गया था - याचिकाकर्ताओं द्वारा निर्धारित समय के भीतर भविष्य का किराया जमा करना जारी रखना न्यायालय की अवमानना नहीं है। ऐसे आदेश के अनुपालन में चूक के लिए अवमानना प्रक्रिया के तहत दंडात्मक मंजूरी लागू नहीं की जानी चाहिए। ऐसे मामले में अपनाई जाने वाली प्रक्रियाओं का सुझाव देना हमारा काम नहीं है। इसलिए, अपील स्वीकार की जाती है।

(10) हमारा विचार है कि अब्दुल रज़ाक के मामले (ऊपर) में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील श्री साहनी द्वारा उठाए गए बिंदु पर निर्णय लेने के करने के लिए बिल्कुल भी प्रासंगिक नहीं है।वर्तमान मामले में विचाराधीन मुद्दा यह है कि क्या विद्वान एकल न्यायाधीश चूक की गई राशि के भुगतान का आदेश दे सकता है, जो वचन का उल्लंघन करने के लिए अवमानना याचिका पर निर्णय लेते समय भुगतान किया गया था, इस प्रकार, कभी भी विचार के लिए नहीं आया।बेशक, निर्णय के पैरा 3 में यह कहा गया था, न्यायालय के उच्च कार्य को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय की अवमानना के माध्यम से कार्यवाही को किसी पक्ष द्वारा अपने प्रतिद्वंद्वी के खिलाफ कानूनी अंगूठे के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। उनके दावे को लागू करने के लिए।" लेकिन उक्त टिप्पणियाँ मामले के तथ्यों के संदर्भ में की गईं। गौरतलब है कि एक आदेश के जरिए अवमाननाकर्ता को पिछले चार साल का किराया चुकाने और भविष्य में भी किराया देना जारी रखने को कहा गया था. यदि इस आदेश को क्रियान्वित किया जा सकता है, तो न्यायालय की अवमानना अधिनियम के प्रावधानों को लागू नहीं किया जाना चाहिए था, जैसा कि ऊपर दिया गया है, निर्णय का तनाव और निर्णय का हिस्सा प्रतीत होता है।

(11) आवेदक का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील श्री गोयल ने **डी. डी. ए. बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (पी) लिमिटेड**[2] **मोहम्मद इदरीस और एक अन्य बनाम रुस्तम जहांगीर बापूजी और अन्य**[3]**, राम प्यारी बनाम जगदीश लाई** [4]**और फर्म गणपत राम राज कुमार बनाम कालू राम और अन्य** [5]**मामलों में उच्चतम न्यायालय के चार फैसलों पर भरोसा किया है।अन्य (5)।डी. डी. ए. बनाम स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (पी) लिमिटेड**

2 1996 J.T. (4) S.C. 479
3 AIR 1984 S.C.1826
4 AIR 1992 S.C.1537
5 AIR 1989 S.C.2285

(उपरोक्त) मामले में शीर्ष अदालत ने कहा कि अदालत के आदेशों के उल्लंघन के लिए, अवमानकों को दंडित करने के अलावा, अदालत अपने आदेशों के उल्लंघन को सुधारने के लिए निर्देश पारित कर सकती है।यह आगे अभिनिर्धारित किया गया कि यह एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि एक अवमानक को अपनी अवमानना के फल का आनंद लेने और/या रखने की अनुमति नहीं दी जानी
चाहिए। मामले के तथ्यों से पता चलता है कि अक्टूबर, 1980 में डी. डी. ए. द्वारा एक भूखंड की नीलामी की गई थी।स्किपर कंस्ट्रक्शन कंपनी ने रुपये की राशि में सबसे अधिक बोली 9.82 करोड़ की पेशकश की। कंपनी ने राशि का 1/4 जमा किया लेकिन शेष राशि जमा नहीं
की।इसने बार-बार विस्तार के लिए कहा जिसे मंजूर कर लिया गया।लेकिन चूंकि कंपनी शेष राशि को जमा करने में भी विफल रही

अंतिम विस्तारित अवधि में, छिपाव को रद्द करने के लिए कार्यवाही की गई थी।कंपनी अदालतगई और रद्द करने पर रोक लगा ली।डी. डी. ए. ने तब ठहरने की छुट्टी के लिए आवेदनकिया।कंपनी एक साथ डी. डी. ए. को और समय देने के लिए अभ्यावेदन दे रही थी। जनवरी,1983 में डी. डी. ए. ने ऐसे खरीदारों द्वारा समय पर भुगतान सुनिश्चित करने के लिए एक सूत्रतैयार करने के लिए कंपनी के अनुरोध पर विचार करने के लिए एक समिति का गठन किया।समिति ने बताया कि ऐसे मामलों में बोलियों को रद्द करने से आमतौर पर डी. डी. ए. को लंबी मुकदमेबाजी का सामना करना पड़ता है और सुझाव दिया कि उन्हें डी. डी. ए. के कारण राशि का भुगतान करने में सक्षम बनाने के लिए खरीदारों को इस शर्त के साथ भूखंड पर विकास/निर्माण शुरू करने की अनुमति दी जानी चाहिए कि भूमि की संपत्ति डी. डी. ए. के पास

तब तक रहेगी जब तक कि पूरा भुगतान नहीं किया जाता।यदि संशोधित अनुसूची के अनुसार पूरा भुगतान नहीं किया गया था, तो डी. डी. ए. को भूखंड में फिर से प्रवेश करने और उस पर किए गए निर्माण, यदि कोई हो, के साथ अधिग्रहण करने का अधिकार होना चाहिए।इस प्रकार, कंपनी को एक संशोधित समझौते पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया।हालाँकि, कंपनी ने सभी प्रकार की आपत्तियाँ उठाईं और संशोधित समझौते को 1987 में ही लागू किया। प्लॉट पर प्रवेश करने और उस पर निर्माण करने की अनुमति दिए जाने से पहले ही कंपनी ने विभिन्न व्यक्तियों को जमीन बेचना शुरू कर दिया और धन प्राप्त करना शुरू कर दिया।इसने समय पर पहली किश्त का भुगतान नहीं किया, लेकिन कुछ देरी के बाद इसका भुगतान किया। इसने दूसरी किश्त का भुगतान नहीं किया।इसके बाद कंपनी और डी. डी. ए. के बीच एक लंबा पत्राचार हुआ। इस बीच कंपनी ने उच्च न्यायालय में सिविल रिट याचिका दायर कर डी. डी. ए. की भवन योजनाओं को मंजूरी देने या अपने जोखिम पर निर्माण शुरू करने की अनुमति देने के विकल्प में निर्देश देने के लिए अनिवार्य रिट की मांग की। मार्च, 1990 में, उच्च न्यायालय ने एक आदेश पारित किया जिसमें कंपनी को स्वीकृत योजना के अनुसार 1,94,40,000 रुपये की राशि एकमहीने के भीतर, जमा करने का उच्च न्यायालय ने एक आदेश पारित किया। उक्त आदेश के
खिलाफ डी. डी. ए. ने विशेष अनुमति याचिका दायर की।इस बीच 1989 का सी. डब्ल्यू. पी. 2371 दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए आया। उच्च न्यायालय ने 21 दिसंबर, 1990 को एक आदेश जारी कर कंपनी को डीडीए के रुपये का भुगतान करने का निर्देश दिया। तीस दिनों के भीतर 8,12,88,798 रुपये देने और उक्त राशि का भुगतान न करने पर 9 जनवरी, 1991 से आगे के सभी निर्माण बंद करने का आदेश दिया गया। यह प्रावधान 21 दिसंबर, 1990 को एक आदेश दिया जिसमें कंपनी को डी. डी. ए. के एक करोड़ रुपये का भुगतान करने का निर्देश दिया गया। यह प्रावधान किया गया था कि इस तरह के भुगतान की चूक में, लाइसेंस (संशोधित समझौता) निर्धारित किया जाएगा और डीडीए भूखंड में फिर से प्रवेश करने का हकदार होगा।कंपनी उच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुसार राशि जमा करने में विफल रही।इसने विशेष अनुमति याचिका के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया और न्यायालय ने अंतरिम आदेश दिया बशर्ते कि कंपनी रुपये की राशि 2.50 करोड़ जमा करे। 8 अप्रैल, 1991 से पहले ढाई करोड़ रुपये जमा किए जाने थे।न्यायालय के निषेधात्मक आदेशों के बावजूद, कंपनी ने 4 फरवरी, 1991 को दिल्ली के प्रमुख समाचार पत्रों में एक विज्ञापन जारी कर लोगों को प्रस्तावित भवन में जगह खरीदने के लिए आमंत्रित किया।विशेष अनुमति याचिका अंततः 25 जनवरी, 1993 को खारिज कर दी गई।डी. डी. ए. ने पुनः प्रवेश किया भूखंड और 10 फरवरी, 1993 को उस पर इमारत के साथ संपत्ति का भौतिक कब्जा ले लिया।29 जनवरी, 1991 से पहले, कंपनी ने प्रस्तावित भवन में जगह बेचने के लिए सहमत विभिन्न पक्षों से चौदह करोड़ रुपये एकत्र किए थे।29 जनवरी, 1991 के बाद भी कंपनी ने कई विज्ञापन जारी किए और पर्याप्त राशि एकत्र की।अदालत के 29 जनवरी, 1991 के आदेशों का उल्लंघन किया गया।जब कंपनी के इस आचरण की सूचना सुप्रीम कोर्ट को दी तो कंपनी के निदेशकों तेजवंत सिंह और उनकी पत्नी सुरिंदर कौर के खिलाफ स्वतः संज्ञान लेते हुए

अवमानना की कार्यवाही शुरू की गई ।उनसे यह बताने के लिए कहा गया था कि उन्होंने उसी विषय-वस्तु के संबंध में 1993 का
मुकदमा संख्या 770 क्यों स्थापित किया, जिस पर पहले ही 23 जनवरी, 1993 को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय दिया जा चुका था और उन्होंने 29 जनवरी, 1991 के सर्वोच्च न्यायालय के आदेश की अवहेलना करते हुए बिक्री के लिए समझौते क्यों किए और तीसरे पक्ष में रुचि क्यों पैदा की ।माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उन्हें दोषी पाया और उन्हें दंडित किया गया ।यह भी आदेश दिया गया कि अवमानकर्ताओं और कंपनी के निदेशकों और उनकी पत्नियों, बेटों और अविवाहित बेटियों के नाम पर मौजूद सभी संपत्तियों और बैंक खातों को कुर्क कर दिया जाएगा ।अपीलार्थियों का प्रतिनिधित्व करने वाले वकील द्वारा दर्शाई गई शर्तों के अधीन, सर्वोच्च न्यायालय ने कारावास की सजा को स्थगित कर दिया ।इसके बाद भी समकालीनों ने दो करोड़ रुपये जमा किए, लेकिन शेष राशि जमा करने में विफल रहे ।वे बैंक गारंटी देने में भी विफल रहे ।उनके द्वारा की गई प्रतिबद्धताओं का पालन करने में उनकी विफलता के परिणामस्वरूप, वे जेल जाने के लिए प्रतिबद्ध थे ।इसके बाद विविध संख्याएँ ।विभिन्न संबंधित पक्षों के आवेदन उच्चतम न्यायालय में दायर किए गए, जिससे कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों पर निर्णय लिया जाना था ।ऐसा ही एक सवाल था कि क्या अवमानकर्ता को अपनी अवमानना के फल का आनंद लेने या बनाए रखने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए ।उक्त बिंदु पर विचार करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय को अपने समक्ष पक्षों के बीच पूर्ण न्याय सुनिश्चित करना चाहिए और यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह गलत सही निर्धारित करे और गलत काम को जारी रखने की अनुमति न दे ।सर्वोच्च न्यायालय ने **सेंचुरी फ्लोर मिल्स लिमिटेड बनाम सुपीया और अन्य**[6] मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के एक फैसले पर भरोसा किया । (5) ।आवेदक/प्रत्यर्थी का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील द्वारा उद्धृत अन्य निर्णयों को संदर्भित करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।यह अब तक कानून का बहुत अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि पक्षों के बीच पूर्ण न्याय सुनिश्चित करने की दृष्टि से , जहां आदेश का उल्लंघन करते हुए कोई कार्य किया जाता है, यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह गलत अधिकार निर्धारित करे और गलत को बनाए रखने की अनुमति न दे ।

(12) वर्तमान मामले में अदालत को किश्तों में दस लाख रुपये की राशि का भुगतान करने का वचन देते समय, अपीलार्थी ने आगे कहा था कि यदि चूक की गई तो उसे अवमानना का दोषी ठहराया जा सकता है ।

विद्वान एकल न्यायाधीश ने, हमारे विचार में, अपीलार्थी को चूक की गई राशि का भुगतान करने का आदेश दिया ।इस मामले में ऐसा निर्देश दिए जाने की आवश्यकता थी ।श्री साहनी द्वारा किसी भी वैध तरीके से यह तर्क नहीं दिया जा सकता था कि अपीलार्थी द्वारा चूक की गई राशि के भुगतान को रोकने में कोई औचित्य था ।हम यहां उल्लेख कर सकते हैं कि यदि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए निर्देशों पर रोक लगा दी जाती है, तो यह वस्तुतः विद्वान कंपनी न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश का निष्पादन न करने के बराबर होगा ।निश्चित रूप से, अपीलार्थी केवल वर्तमान अपील दायर करके उस राशि का भुगतान करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकता है जिसे उसने न्यायालय को देने का बीड़ा उठाया था ।इस तरह की राशि के भुगतान पर रोक लगाना प्रतिवादी के साथ अन्याय करना होगा ।

(13) जहां तक श्री साहनी के इस तर्क का सवाल है कि एक बार अपील स्वीकार कर ली गई है और उस पर रोक लगा दी गई है, तो इसे तब तक जारी रखा जाना चाहिए जब तक कि अपील जारी रहे, यह कहना पर्याप्त है कि पहले दिए गए आदेश पर टिके रहना कोई न्यायिक वीरता नहीं है विशेष रूप से तब पारित किया गया जब इसे दूसरे पक्ष को सुने बिना पारित किया गया और इससे स्पष्ट रूप से मामले में न सुने गए पक्ष के साथ अन्याय हुआ है। विशेष रूप से तब पारित किया गया जब इसे दूसरे पक्ष को सुने बिना पारित किया गया और इससे स्पष्ट रूप से मामले में न सुने गए पक्ष के साथ अन्याय हुआ है। ऐसा आदेश जब भी न्यायालय के संज्ञान में आता है, या तो प्रभावित पक्ष द्वारा किए गए आवेदन पर या अन्यथा परिस्थितियों के अनुसार उसे वापस लेना पड़ता है या संशोधित करना पड़ता है ।

(14) ऊपर जो कहा गया है, उसे ध्यान में रखते हुए, हम 8 जून, 1998 के आदेश को संशोधित करते हुए कहते हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दर्ज किए गए दोषसिद्धि के आदेश पर अपील के लंबित रहने के दौरान रोक रहेगी, लेकिन विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्देश पर रोक रहेगी। डिफ़ॉल्ट राशि का भुगतान कायम रहेगा. दूसरे शब्दों में, उपरोक्त भुगतान के संबंध में कोई रोक नहीं होगी। आवेदन तदनुसार निस्तारित किया जाता है। जे एस टी ।

---

6 AIR 1975 Madras 270

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जासकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

मनजोत कौर
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
गुरूग्राम, हरियाणा